

काबुलीवाला

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कहानी

मेरी पाँच बरस की लड़की मिनी से घड़ीभर भी बोले बिना नहीं रहा जाता। एक दिन वह सवेरे-सवेरे ही बोली, "बाबूजी, रामदयाल दरबान है न, वह 'काक' को 'कौआ' कहता है। वह कुछ जानता नहीं न, बाबूजी।" मेरे कुछ कहने से पहले ही उसने दूसरी बात छेड़ दी। "देखो, बाबूजी, भोला कहता है – आकाश में हाथी सूँड से पानी फेंकता है, इसी से वर्षा होती है। अच्छा बाबूजी, भोला झूठ बोलता है, है न?" और फिर वह खेल में लग गई।

मेरा घर सड़क के किनारे है। एक दिन मिनी मेरे कमरे में खेल रही थी। अचानक वह खेल छोड़कर खिड़की के पास दौड़ी गई और बड़े जोर से चिल्लाने लगी, "काबुलीवाले, ओ काबुलीवाले!"

कंधे पर मेवों की झोली लटकाए, हाथ में अँगूर की पिटारी लिए एक लंबा सा काबुली धीमी चाल से सड़क पर जा रहा था। जैसे ही वह मकान की ओर आने लगा, मिनी जान लेकर भीतर भाग गई। उसे डर लगा कि कहीं वह उसे पकड़ न ले जाए। उसके मन में यह बात बैठ गई थी कि काबुलीवाले की झोली के अंदर तलाश करने पर उस जैसे और भी दो-चार बच्चे मिल सकते हैं।

काबुली ने मुसकराते हुए मुझे सलाम किया। मैंने उससे कुछ सौदा खरीदा। फिर वह बोला, "बाबू साहब, आप की लड़की कहाँ गई?"

मैंने मिनी के मन से डर दूर करने के लिए उसे बुलवा लिया। काबुली ने झोली से किशमिश और बादाम निकालकर मिनी को देना चाहा पर उसने कुछ न लिया। डरकर वह मेरे घुटनों से चिपट गई। काबुली से उसका पहला परिचय इस तरह हुआ। कुछ दिन बाद, किसी ज़रूरी काम से मैं बाहर जा रहा था। देखा कि मिनी काबुली से खूब बातें कर रही है और काबुली मुसकराता हुआ सुन रहा है। मिनी की झोली बादाम-किशमिश से भरी हुई थी। मैंने काबुली को अठन्नी देते हुए कहा, "इसे यह सब क्यों दे दिया? अब मत देना।" फिर मैं बाहर चला गया।

कुछ देर तक काबुली मिनी से बातें करता रहा। जाते समय वह अठन्नी मिनी की झोली में डालता गया। जब मैं घर लौटा तो देखा कि मिनी की माँ काबुली से अठन्नी लेने के कारण उस पर खूब गुस्सा हो रही है।

काबुली प्रतिदिन आता रहा। उसने किशमिश बादाम दे-देकर मिनी के छोटे से हृदय पर काफ़ी अधिकार जमा लिया था। दोनों में बहुत-बहुत बातें होतीं और वे खूब हँसते। रहमत काबुली को देखते ही मेरी लड़की हँसती हुई पूछती, "काबुलीवाले, ओ काबुलीवाले! तुम्हारी झोली में क्या है?"

रहमत हँसता हुआ कहता, "हाथी।" फिर वह मिनी से कहता, "तुम ससुराल कब जाओगी?"

इस पर उलटे वह रहमत से पूछती, "तुम ससुराल कब जाओगे?"

रहमत अपना मोटा घूँसा तानकर कहता, "हम ससुर को मारेगा।" इस पर मिनी खूब हँसती।

हर साल सरदियों के अंत में काबुली अपने देश चला जाता। जाने से पहले वह सब लोगों से पैसा वसूल करने में लगा रहता। उसे घर-घर घूमना पड़ता, मगर फिर भी प्रतिदिन वह मिनी से एक बार मिल जाता।

एक दिन सवेरे मैं अपने कमरे में बैठा कुछ काम कर रहा था। ठीक उसी समय सड़क पर बड़े ज़ोर का शोर सुनाई दिया। देखा तो अपने उस रहमत को दो सिपाही बाँधे लिए जा रहे हैं। रहमत के कुर्ते पर खून के दाग हैं और सिपाही के हाथ में खून से सना हुआ छुरा।

कुछ सिपाही से और कुछ रहमत के मुँह से सुना कि हमारे पड़ोस में रहने वाले एक आदमी ने रहमत से एक चादर खरीदी। उसके कुछ रुपए उस पर बाकी थे, जिन्हें देने से उसने इनकार कर दिया था। बस, इसी पर दोनों में बात बढ़ गई, और काबुली ने उसे छुरा मार दिया।

इतने में "काबुलीवाले, काबुलीवाले", कहती हुई मिनी घर से निकल आई। रहमत का चेहरा क्षणभर के लिए खिल उठा। मिनी ने आते ही पूछा, "तुम ससुराल जाओगे?" रहमत ने हँसकर कहा, "हाँ, वहीं तो जा रहा हूँ।"

रहमत को लगा कि मिनी उसके उत्तर से प्रसन्न नहीं हुई। तब उसने घूँसा दिखाकर कहा, "ससुर को मारता पर क्या करूँ, हाथ बँधे हुए हैं।"

छुरा चलाने के अपराध में रहमत को कई साल की सज़ा हो गई।

काबुली का ख्याल धीरे-धीरे मेरे मन से बिलकुल उतर गया और मिनी भी उसे भूल गई।

कई साल बीत गए।

आज मेरी मिनी का विवाह है। लोग आ-जा रहे हैं। मैं अपने कमरे में बैठा हुआ खर्च का हिसाब लिख रहा था। इतने में रहमत सलाम करके एक ओर खड़ा हो गया।

पहले तो मैं उसे पहचान ही न सका। उसके पास न तो झोली थी और न चेहरे पर पहले जैसी खुशी। अंत में उसकी ओर ध्यान से देखकर पहचाना कि यह तो रहमत है।

मैंने पूछा, "क्यों रहमत कब आए?"

"कल ही शाम को जेल से छूटा हूँ," उसने बताया।

मैंने उससे कहा, "आज हमारे घर में एक जरूरी काम है, मैं उसमें लगा हुआ हूँ। आज तुम जाओ, फिर आना।"

वह उदास होकर जाने लगा। दरवाज़े के पास रुककर बोला, "ज़रा बच्ची को नहीं देख सकता?"

शायद उसे यही विश्वास था कि मिनी अब भी वैसी ही बच्ची बनी हुई है। वह अब भी पहले की तरह "काबुलीवाले, ओ काबुलीवाले" चिल्लाती हुई दौड़ी चली आएगी। उन दोनों की उस पुरानी हँसी और बातचीत में किसी तरह की रुकावट न होगी। मैंने कहा, "आज घर में बहुत काम है। आज उससे मिलना न हो सकेगा।"

वह कुछ उदास हो गया और सलाम करके दरवाज़े से बाहर निकल गया।

मैं सोच ही रहा था कि उसे वापस बुलाऊँ। इतने में वह स्वयं ही लौट आया और बोला, "यह थोड़ा सा मेवा बच्ची के लिए लाया था। उसको दे दीजिएगा।"

मैंने उसे पैसे देने चाहे पर उसने कहा, 'आपकी बहुत मेहरबानी है बाबू साहब! पैसे रहने दीजिए।' फिर ज़रा ठहरकर बोला, “आपकी जैसी मेरी भी एक बेटी हैं। मैं उसकी याद कर-करके आपकी बच्ची के लिए थोड़ा-सा मेवा ले आया करता हूँ। मैं यहाँ सौदा बेचने नहीं आता।”

उसने अपने कुरते की जेब में हाथ डालकर एक मैला-कुचैला मुड़ा हुआ कागज का टुकड़ा निकला और बड़े जतन से उसकी चारों तह खोलकर दोनो हाथों से उसे फैलाकर मेरी मेज पर रख दिया। देखा कि कागज के उस टुकड़े पर एक नन्हें से हाथ के छोटे-से पंजे की छाप है। हाथ में थोड़ी-सी कालिख लगाकर, कागज पर उसी की छाप ले ली गई थी। अपनी बेटी इस याद को छाती से लगाकर, रहमत हर साल कलकत्ते के गली-कूचों में सौदा बेचने के लिए आता है।

देखकर मेरी आँखें भर आईं। सबकुछ भूलकर मैंने उसी समय मिनी को बाहर बुलाया। विवाह की पूरी पोशाक और गहनें पहने मिनी शरम से सिकुड़ी मेरे पास आकर खड़ी हो गई।

उसे देखकर रहमत काबुली पहले तो सकपका गया। उससे पहले जैसी बातचीत न करते बना। बाद में वह हँसते हुए बोला, “लल्ली! सास के घर जा रही हैं क्या?”

मिनी अब सास का अर्थ समझने लगी थी। मारे शरम के उसका मुँह लाल हो उठा।

मिनी के चले जाने पर एक गहरी साँस भरकर रहमत ज़मीन पर बैठ गया। उसकी समझ में यह बात एकाएक स्पष्ट हो उठी कि उसकी बेटी भी इतने दिनों में बड़ी हो गई होगी। इन आठ वर्षों में उसका क्या हुआ होगा, कौन जाने? वह उसकी याद में खो गया।

मैंने कुछ रुपए निकालकर उसके हाथ में रख दिए और कहा, “रहमत! तुम अपनी बेटी के पास देश चले जाओ।”

Kabuliwala by Rabindranath Tagore